# शिवराज-भूषण

## *मंगलाचरण*

### गणेशस्तुति

कवित्त मनहरण ❀

बिकट अपार भव-पंथ के चले को स्रम-
हरन, करन-बिजना से ब्रह्म ध्याइए ।
यहि लोक परलोक सुफल करन कोक-
नद से चरन हिए आनि के जुड़ाइए ।।
अलिकुल-कलित-कपोल, ध्यान ललित,
अनंदरूप-सरित मैं भूषण अन्हाइए ।
पाप-तरु-भंजन, बिघन-गढ़-गंजन
जगत-मन-रंजन, द्विरदमुख गाइए ।।

शब्दार्थ—करन = कर्ण, कान । बिजना = व्यजन, पंखा । ब्रह्म = श्रीगणेश जी, भवानी, सूर्य, विष्णु और महादेव ये पाँच ब्रह्म रूप माने जाते हैं, यहाँ गणेशजी से तात्पर्य है । भूषण ने इनमें से आदि तीन की स्पष्ट रूप से स्तुति की है, विष्णु और शिव की क्रमशः चौथे और पाँचवें दोहों में केवल चर्चा-मात्र की है । कोकनद = लालकमल । जुड़ाइए = शीतल कीजिये । कलित = युक्त । ललित = सुन्दर ।

---

❀ वह वर्णवृत्त है । इसमें ३१ वर्ण होते हैं, गुरु लघु का कोई नियम नहीं होता, किन्तु १६ और १५ वर्णों पर यति होती है । यदि ८, ८, ८ तथा ७ वर्णों पर यति हो तो लय अच्छी रहती है । अंत में लघु गुरु होना चाहिए ।

भंजन=तोड़ना। गंजन=नाश करना। द्विरद=हाथी। द्विरद-मुख=हाथी के समान मुख वाले, श्री गणेश जी।

**अर्थ**—ब्रह्मस्वरूप श्री गणेशजी का ध्यान कीजिए जो अपने कान-रूपी पंखे ( के झलने ) से इस विकट अपार संसार-रूपी मार्ग में चलने की थकान को दूर करते हैं। इस लोक और परलोक में मनोरथ सफल करने के लिए श्री गणेशजी के लाल-कमल के समान चरणों को हृदय में धारण कर उसे शीतल कीजिए। भूषण कवि कहते हैं कि जिनके कपोल भौंरों के समूह से युक्त हैं ( मद के कारण भौंरे हाथी के गंडस्थल पर मँडराते हैं ) और जिनका ध्यान धरना बड़ा सुन्दर है, ऐसे श्रीगणेश जी की आनन्द देने वाली रूप-नदी (अथवा आनंद-रूपी नदी) में स्नान कीजिए। पाप-रूपी वृक्ष के तोड़ने वाले, विघ्नों के किले का नाश करने वाले और संसार के मन को प्रसन्न करने वाले श्री गणेशजी के गुणों का गान करना चाहिए।

**अलंकार**—भव-पंथ, आनन्द-रूप-सरित, पाप-तरु, विघन-गढ़ में रूपक है। कोकनद से चरन और द्विरद-मुख में उपमा है। पद में वृत्यनुप्रास भी है।

भवानी-स्तुति

छप्पय अथवा षट्पद†

**जै जयंति जै आदि सकति जै कालि कपर्दिनि।**
**जै मधुकैटभ-छलनि देवि जै महिष-विमर्दिनि॥**

---

† यह छः पद का मात्रिक छन्द है, इस में प्रथम चार पद रोला छन्द के और अन्तिम दो उल्लाला छन्द के होते हैं। रोला छन्द का प्रत्येक पद २४ मात्रा का होता है और उसमें ११ और १३ मात्राओं पर यति होती है। उल्लाला छन्द २८ मात्रा का होता है, जिसमें पहली यति १५ वीं मात्रा पर होती है।

जै चमुंड जै चंड मुंड-भंडासुर-खंडिनि ।
जै सुरक्त जै रक्तबीज बिड्डाल-बिहंडिनि ॥
जै जै निसुंभ सुंभद्दलनि, भनि भूषन जै जै भननि ।
सरजा समत्थ शिवराज कहँ, देहि बिजै जै जग-जननि ॥२॥

शब्दार्थ—जयंति = विजयिनी, देवी । कपर्दिनी = कपर्दी ( शिव ) की स्त्री पार्वती, भवानी । मधुकैटभ = मधु और कैटभ नाम के दो दैत्य थे, जिन्हें विष्णु भगवान ने मारा था । योगमाया ( देवी ) ने इनकी बुद्धि को छला था, तभी ये मारे गये थे । महिष = एक राक्षस जिसे दुर्गा ने मारा था । विमर्दिनि = मर्दन करने वाली, नाश करने वाली । चमुंड = चामुंडा, दुर्गा । चंड मुंड = दो राक्षस, इन्हें दुर्गा ने मारा था, ये शुंभ निशुंभ के सेनापति थे । भंडासुर = इस नाम का कोई प्रसिद्ध राक्षस नहीं पाया जाता जिसे दुर्गा ने मारा हो, यह विशेषण शब्द जान पड़ता है—भंड + असुर = भंड ( पाखंडी ) असुर, पाखंडी राक्षस । चंड मुंड भंडासुर = पाखडी चंड और मुंड राक्षस । सुरक्त रक्तबीज = रक्तबीज और सुरक्त ये दो राक्षस थे, इन्हें दुर्गा ने मारा था । बिड्डाल = विडालाक्ष दैत्य, इसे दुर्गा ने मारा था । बिहंडिनि = मारने वाली । निसुंभ सुंभ = ये दोनो दैत्य कश्यप ऋषि के पुत्र थे । तपस्या से वरदान पाकर ये बड़े प्रबल हो गये थे और बड़ा अत्याचार करने लगे थे । इन्होंने देवताओं को जीत लिया था । जब इन्होंने रक्तबीज से सुना कि देवी ने महिषासुर को मार डाला, तब इन्होंने देवी को नष्ट करने की ठानी । तब देवी ने इन सब को सेना सहित मार डाला । भनि = कहता है । भननि = कहने वाली, सरस्वती । सरजा = ( फारसी ) सरजाह उपाधि जो ऊँचे दर्जे के लोगों को मिलती थी । शिवाजी के किसी पूर्व पुरुष को यह उपाधि मिली थी, सरजा = ( अरबी ) शरजः = सिह । समत्थ = समर्थ, शक्तिशाली ।

**अर्थ**—हे विजयिनी! आदि शक्ति, कालिका भवानी! आपकी जय हो। आप मधु और कैटभ दैत्यों को छलनेवाली तथा महिषासुर का नाश करनेवाली हो। हे चामुंडे! आप चंड मुंड जैसे पाखंडी राक्षसों को नष्ट करने वाली हो, आप ही ने सुरक्त, रक्तबीज और बिडाल को मारा है, आप की जय हो। भूषण कवि कहते हैं कि आप निशुंभ और शुंभ दैत्यों का नाश करने वाली हो और आप ही सरस्वती-रूप हो अथवा 'जय-जय' शब्द कहने वाली हो, आप की जय हो। हे जगन्माता! आप शक्तिशाली सरजा राजा शिवाजी के लिए विजय प्रदान कीजिये, आप की जय हो।

**अलङ्कार**—उल्लेख और वृत्यनुप्रास, 'ड' की कई बार आवृत्ति हुई है।

सूर्यस्तुति

**दोहा** ‡—तरनि, जगत-जलनिधि-तरनि, जै जै आनँद-ओक।
कोक-कोकनद-सोकहर, लोक लोक आलोक ॥३॥

**शब्दार्थ**—तरनि=सूर्य, नौका। जगत-जलनिधि=संसार-रूपी समुद्र। ओक=स्थान। कोक=चक्रवाक पक्षी, यह सूर्य को देखकर बड़ा प्रसन्न होता है। कोकनद=कमल। आलोक=प्रकाश।

**अर्थ**—हे आनन्द के स्थान श्री सूर्यभगवान! आप संसार-रूपी समुद्र के लिए नौका स्वरूप हैं। आप ही चक्रवाक और कमलों का दुख दूर करने वाले हैं। समस्त संसार में आपही का प्रकाश है, आपकी जय हो।

**अलंकार**—'तरनि, जलनिधि तरनि' 'लोक लोक-आलोक में'

---

‡ यह मात्रिक छन्द है, इसके पहले और तीसरे चरण में १३ और दूसरे और चौथे चरण में ११ मात्राएँ होती हैं।

यमक है। 'क' अक्षर की आवृत्ति कई बार होने से वृत्यनुप्रास। जगत-जलनिधि-तरनि में रूपक है।